International Journal of Applied Research 2018; 4(1): 445-450

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2018; 4(1): 445-450
www.allresearchjournal.com
Received: 25-11-2017
Accepted: 29-12-2017

डॉ० अशोक कुमार
ल0 न0 मि0 वि0, दरभंगा, ग्राम एवं पत्रालय–बेलामेध, भाया–दलसिंहसराय, जिला–समस्तीपुर, बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ० अशोक कुमार
ल0 न0 मि0 वि0, दरभंगा, ग्राम एवं पत्रालय–बेलामेध, भाया–दलसिंहसराय, जिला–समस्तीपुर, बिहार, भारत

गर्भाधान संस्कार की दार्शनिकता

डॉ० अशोक कुमार

प्रस्तावना

आस्तिक दशर्नानुसार आत्मा और पुर्नजन्म क्या है? क्या आत्मा का आवाहन भी होता है? जीव कैसे पुर्नजन्म के लिए भावी माता–पिता का चयन करता हैं और माता–पिता कैसे भावी संतान का चयन करता है। इसी गर्भाधान संस्कार के दार्शनिक रहस्य को जानेंगे।

पुनर्जन्म भारतीय तत्त्वज्ञान (Philosophy) का मौलिक सिद्धान्त है। ऐसे तो मुसलमान और यहूदि लोग भी पुनर्जन्म को मानते है।[1] आप्लृव्याप्तौ क्रियानुसार–जो सर्वत्र व्यापक है। जो निरन्तर जन्म जन्मान्तरों में ईश्वरीय व्यवस्था से कर्मानुसार विभिन्न योनियों में गमनागमन करता हो, उसे आत्मा कहते हैं।[2] जो जिससे सुक्ष्म होता है वही उसका आत्मा होता है।[3] जब बाह्य और अन्तःकरण सभी क्लोरोफार्म या समाधी के द्वारा बेकार कर दिये जाते हैं तब भी प्राणियों के शरीर जीवित प्राणियों के सदृश बने रहते हैं न बेकार होते न सड़ते–गलते हैं। अंगहीन या अंगकट जाने पर भी ऐसी सत्ता का शरीर में मौजूद होना। जो इन्द्रियों से भिन्न हो और जिस की उपस्थिति का यह फल होता है कि इन्द्रियों के बेकार होने पर भी शरीर सड़ने–गलने से सुरक्षित रहता है और जिसके निकल जाने से शरीर सड़ने दुर्गन्ध करने लगता है। वही आत्मा है।[4] याज्ञवल्क्य मैत्रेयी से कहते हैंः–''जीव नहीं मरता। जब जीव शरीर से निकल जाता है तो यह शरीर नष्ट हो जाता है''।[5] शुक्रशोणित के संयोग में मिलने वाली यही तीसरी जीवात्मा है, जिसके सिवाय गर्भ नहीं उत्पन्न हो सकता।[6] यह जीव अत्यन्त सूक्ष्म है, इसलिए गर्भाशय में प्रवेश करते समय इसका दर्शन नहीं होता है।[7] परन्तु दिव्यदृष्टि से इसका भी दर्शन हो सकता है।[8] इसी जीव से भौतिकदृष्टया भी अपत्य उत्पन्न होता है।

भारतीय दर्शनशास्त्र की दृष्टि से शुक्र और आर्तव महाभूतात्मक अचेतन हैं। उनमें चैतन्य प्राप्त होने के लिए चेतनावान् आत्मा या पुरूष का उनके साथ संयोग होना आवश्यक है। इसलिए गर्भ संज्ञा में शुक्र, शोणित और आत्मा तीनों का निर्देश निरपवाद किया जाता है।[9] वीर्य में मिलने वाला, वीर्य के साथ वायु से बाहर आने वाला, वीर्य में जिसके होने से गर्भ होता है, न होने से गर्भ नहीं होता ऐसा पदार्थ है, संक्षेप में यह वीर्य का बीज है।[10] योगवासिष्ठ में जीव को मनुष्य का बीज कहा है। इससे यह स्पष्ट है कि वैद्यकशास्त्र में शुक्रगत गर्भोत्पादक बीज को 'जीव' (आत्मा) कहा हैं।

दार्शनिक दृष्टि में आत्मा निरन्तर जन्म जन्मान्तरों में ईश्वरीय व्यवस्था से कर्मानुसार विभिन्न योनियों में सूक्ष्म लिंग शरीर के साथ सत्व, रज, तम गुणों से युक्त, देव, असुर, आदि भावों से युक्त, प्रविष्ट होकर स्थित होता है।[11] इस लिए शारीरिक एवं मानसिक रुप से पवित्र हो कर गर्भाधान संस्कार द्वारा ईश्वर से प्रार्थना कर पवित्रात्मा का अपने गर्भ में प्रवेशार्थ आवाहन करते हैं। संस्कार इस लोक तथा परलोक में पवित्र करने वाले होते हैं। यदि जीवात्मा शरीर के साथ ही नष्ट हो जाये, तो परलोक में पवित्रता की बात निरर्थक हो जाये। अतः जीवात्मा अमर होने से संस्कारों से दोनों लोकों में पवित्र होता है।[12]

भुःलोक (पृथ्वी) पर निवास करने वाले जीव तीन प्रकार के हैं। गोचर (मनुष्य पशु और वनस्पतियाँ) जलचर (मत्स्य आदि) और नभचर (पक्षी कीट पतंग आदि) आत्मा कर्मों के अनुसार अनेक जन्मों में विचरता है।[13] परलोक में कर्मफलोपभोग–पर्यन्त रहकर पुनरावृत्ति होती है।[14] जन्म–मरण के हेतुभूत कर्मपाशों से बँधे हुए माया से विमोहित होकर कभी भी वैराग्य को प्राप्त नहीं करते।[15] फिर पूर्ववत् जन्म मरण के चक्र में पर जाता है।[16] ,[17] आत्मा निचले जन्मों में जाता है फिर ऊँची कर्म भूमि (मनुष्य योनि) में आता है।[18] एक शरीर को त्यागने के पश्चात् अपने शुभाशुभ कर्मों के अनुसार उसी योनि में अथवा किसी अन्य योनि में अन्य शरीर को प्राप्त करता है। जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को छोड़ कर नये वस्त्र ग्रहण कर लेता है, वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीरों को छोड़कर नये शरीरों को प्राप्त करता है।[19]

जीवात्मा अपने कर्मानुसार उत्तम मध्यम तथा अधम योनियों में जन्म लेता रहता है। जीवात्मा मनुष्य योनि में आकर जो मन वाणी तथा शरीर से शुभाशुभ कर्म करता है। उसके अनुसार ही जन्मान्तरों में उत्तम, मध्यम, तथा अधम तीन प्रकार की गतियाँ होती है।'' [20] जीवात्मा को कर्मानुसार योनियाँ मिलती है। जीवात्मा जैसा शुभाशुभ कर्म करता है, वैसा ही उसकी सत्त्वादि वृत्तियाँ बन जाती हैं और उन वृत्तियों के अनुसार ही जीव जन्म–जन्मान्तरों में जाते रहते हैं। [21] शुभ–कर्मों में जीव सत्त्व गुणी होते ही प्रवृत्त होता है और सत्त्व गुण की अधिकता के कारण जीवों का ऐसी योनियों में जन्म होता है जो ऊर्ध्व अर्थात् उन्नत करने वाली है। जिनमें जन्म से लेकर आध्यात्मिक उन्नति तथा आत्मज्ञान की अधिकाधिक सुविधा होती है, ऐसे माता–पिता के यहाँ जन्म लेकर जीवात्मा सर्वोन्नत (सर्वोत्कर्षवाले) मोक्ष–सुख को प्राप्त करने में समर्थ होता है। [22] और जो तमोगुणी जीव हैं वे इस सृष्टि में निम्नस्तर की योनियों में जन्म पाते हैं। [23] और जो रजोगुण वृत्ति के जीव हैं, वे मध्यमश्रेणी के कुलों में जन्म पाते हैं। [24]

शुभाशुभ, धर्माधर्म, पापपुण्य, राजस तामस इत्यादि विविध प्रकार के कर्म प्राणी करता है और उन्हीं की प्रेरणा से वह जन्म–जन्मान्तर में फँस जाता है। [25] जिस कर्म के कारण (जीव) पुनर्जन्म में प्रेरित होता है, उसी के अनुसार (उस जन्म में सब कुछ) प्राप्त करता है; और पूर्वजन्म में अभ्यास किये हुए जो गुण होते हैं, उन्हीं को (दूसरे जन्म में) धारण करता है। [26] जिस कर्म से जीव प्रेरित होता है, उसी के अनुरूप वह दूसरे जन्म में फल भोगता है। [27]

वेदान्तशास्त्रानुसार जीव प्राक्तन कर्मों (दैवसंग) से अधिवासित होने के कारण बार–बार जन्म लेता है। अर्थात् 'भाव' और 'कर्म' पर्यायवाची शब्द हैं। सुश्रुतसंहिता में सांख्य और वेदान्त दोनों का काफी समानता है। इसलिए जीव के जन्मग्रहण के कारण बतलाने के लिए दोनों शास्त्रों के शब्द यहाँ (दैवसंग और भाव) प्रयुक्त किये हैं। सांख्यदर्शनानुसार सत्त्व रज तम इन गुणों के कारण बुद्धि में जो विविध स्थिरन्तर होते हैं, उनको 'भाव' कहते हैं, ये भाव पुरूष में सुवास या वस्त्र में रंग के समान लिंग शरीर में रहते हैं और जीव इन भावों से अधिवासित होने के कारण देव, मनुष्य या पशुयोनि में बार–बार जन्म लेता है। [28] एक जन्म में पुरूष को जो कुछ भी अनुभव होता है, उसके संस्कार मृत्यु के बाद लिंगशरीर के साथ जाते हैं और दूसरे जन्म में आविर्भूत होते हैं। उस जन्म के संस्कार प्रथम जन्म के संस्कारों के साथ मृत्यु के बाद तीसरे शरीर में चले जाते हैं। इस तरह जन्म–जन्मान्तर के संस्कार इकट्ठे होते जाते हैं। यद्यपि शरीर बदलता है तथापि आत्मा और मन के द्वारा सब जन्मों के संस्कारों की परम्परा कायम (अविच्छिन्न) रखी जाती है। [29] शरीर के नष्ट होने के साथ शरीरस्थ आत्मा की मृत्यु न होकर वह आत्मा उस देह में प्राप्त संस्कारों के साथ दूसरे देह में चला जाता है। [30]

तब शुभाशुभ मिश्रित कर्मों के समानता से मानव में, [31] अशुभ कर्म की अधिकता से या वाणी के दोषों के कारण पशु–पक्षी में, [32] अशुभ कर्म की अधिकता से या शारीरिक कर्मो के दोषों से स्थावर (वृक्षादि) में, मानसिक दोषों के कारण चाण्डालादि में, [33] शुभ से शुभ आचारण से ब्राह्मण, क्षत्रिय अथवा वैश्य के घर में, अशुभ आचारण से कुत्ते, शूकर तथा चाण्डाल योनियों में, [34] और जो इन दोनों मार्गों (देवायान अथवा पितृयान) से नहीं जाते, वे कीट पतंगे और जो दाँत से काटने वाले सर्प आदि नीच योनियों में, [35] सत्त्वगुणी पापरहित लोकों में, [36] योगी पुरूष शुद्ध आचरण वाले श्रीमान् पुरूषों के घर में, [37] सतोगुणी जीव देवत्व में, रजोगुणी मनुष्यत्व में, [38] और तमोगुणी पशु–पक्षी योनियों में, [39]

पुण्य कर्मों के कारण उदान पुण्य लोक में, पाप कर्मों के कारण पाप लोक (नीची योनियों) में, और पुण्य और पाप कर्मों के कारण मनुष्य लोक में, [40] वनस्पति अथवा पशु योंनियों में अनगिनत जन्म और मरण से दुष्कर्मो का फल दुःख भोग कर पापरहित होकर [41] पाप और पुण्य का पलड़ा सम (सन्तुलित) होने पर पुनः मनुष्य योनि में, [42] शरीर धारणार्थ अपने अनुकूल भावी पिता के शरीर में वनस्पति, औषधि, वायु द्वारा चुपके से प्रविष्ट हो कर [43] और उसके वीर्य के कण में कुछ काल तक अर्ध मूछितावस्था में रहा। [44, 45], एवं [46] लेकिन नीचली योनियों में शरीर त्याग करने और नया शरीर धारण करने में कोई समय नहीं लगता। तृणजलायुका (बरसाती 'लट'नाम का क्षुद्र प्राणी) की भांति जो कि एक तृण के अन्त में पहुँच कर नया तृण ग्रहण करने के पहिले तृण को छोड़ता है। उसी प्रकार यह आत्मा एक देह को त्याग कर दूसरे शरीर का अवलम्वन लेकर चला जाता है। [47]

जिस प्रकार अरणी को मथने से आग निकलती है, उसी तरह स्त्री–पुरूष की योनि और लिंग की रगड़ से वीर्य और आतर्व के मिलने से अपने कर्मरूपी क्लेशों से प्ररित हुआ जीवात्मा दैव की प्रेरणा से कर्मानुरोधी शरीर प्राप्त करने के लिये रेत में अधिष्ठित होकर [48] पुरूष के वीर्य कण का आश्रय स [49] गर्भपातक [50, 51, 52, 53] के गर्भ को छोड़कर अपने अनुकूल भावी माता के गर्भ में तत्काल जीव शुक्र के समान हर्षोदीरित वायु से प्रेरित किया हुआ गर्भाशय में गर्भाधान समय ही प्रविष्ट हो कर [54] नौ मास तक प्रायः अर्ध मूर्छितावस्था में रह कर जन्म लेता है। [55]

आवाहन करने से आत्मा कैसे आते हैं ?–

प्राचीन धर्मशास्त्र के अनुसार जीवात्मा पर संस्कार करने से ज्यादा आवश्यक है गर्भ में आने के लिए उत्कृष्ट जीवात्मा का आवाहन करना। जैसे बबूल का बीज बोने से चाहे जितने संस्कार उस पर किए जाएं उससे आम नहीं मिलेगा। अच्छे आम के लिए आम का बीज ही चाहिए और उसकी सही तरह से देखभाल भी करनी पड़ेगी, उसी प्रकार जिस गर्भ के लिए जीव का आवाहन करना हो, वह आत्मा जितनी सुसंस्कारित होगी उतना ही अच्छा होता है। पति–पत्नी को चाहिए कि सुसंस्कारित आत्मा के आवाहन के लिए अपने अंदर योग्य क्षमता विकसित करें, यदि चिंता में डूबकर आवाहन किया जाए तो चिंता में परेशान आत्मा को ही आवाहन पहुँचेगा। पति–पत्नी की विचारधारा भी सकारात्मक होनी चाहिए। क्योंकि सज्जन ही सज्जन के प्रति आकर्षित होता है।

यह मान लिया कि आत्मा अमर है। लेकिन ईश्वर की दुनिया भी तो अनन्त है तो एक शरीर को छोड़ कर नये शरीर ग्रहण करने लिए आप के पास ही क्यों आयेगा? फोटोग्राफी कैमरे के एक इंच छोटे शीशे में दिल्ली का लालकिला, पूरी कुतुबमीनार एवं लाखों का जनसमूह कैसे आ जाता है? कभी आपने विचार किया कि आँखों के लघुतम काले तिल में सूर्य–चाँद, पूरा आकाश, नक्षत्रवली कैसे समा जाते हैं। वैसे ही माता–पिता के तन–मनानुकूल आत्मा आकर्षित होता है।

इसका वैज्ञानिक पक्ष–समस्त कर्मकाण्ड श्रद्धा प्रधान एवं 'भावनावाद' के सिद्धांत पर आधारित हैं। फिर भी वैज्ञानिकों के अनुसार वेदमन्त्रों के उच्चारण या प्रार्थना से शब्दों की ध्वनि तरंगें ईथर किरणों के माध्यम से सीधे उस स्थान को आन्दोलित करती हैं, जिससे आत्माकर्षण से वहाँ प्रकट हो जाता है।

एक छोटा–सा दृष्टान्त माचिस का ही ले सकते हैं। माचिस की तीली में पहले से अग्नि सूक्ष्म (अदृष्ट) रूप में विद्यमान है। केवल घर्षण करने से तत्काल अग्नि प्रकट हो जाती है। वैसे ही पोटासियम पैरामैग्नेट एवं गिलसीरीन मेल से अग्नि प्रकट होती है। दो पत्थर या लकड़ी को रगड़ने से अग्नि प्रकट होती है। सोडियम को जल में डालने से अग्नि प्रकट होती है। इस सब में अग्नि पूर्व से विद्यमान होते हैं सिर्फ एक संयोग चाहिए प्रकट होने के लिए। ऐसे ही आत्मा स्वगुण कर्मानुसार आकर्षित किया जाता है।

हिन्दू सनातन धर्म की मान्यतानुसार कोई भी घटना अचानक घटित नहीं होती। पूर्वजन्मकृत पाप व पुण्य के परिणाम स्वरूप दुःख, रोग एवं व्याधि स्वयंमेव ही प्रकट होते हैं। आयुर्वेद का प्रसिद्ध ग्रन्थ माधवनिदान कहता है–पूर्वजन्म के पाप ही कर्मज रोग एवं व्याधि बनकर मनुष्य को कष्ट देते हैं और उनकी शान्ति

औषधि, दान, जप, हवन एवं देवपूजन से ही होती है।[56] यह बात भारत ही नहीं समस्त विश्व मानता है कि दवा के बाद दुआ, आशीर्वाद खैरात एवं ईश–वन्दना से अनेक प्रकार के कष्ट रोग–व्याधि चमत्कारी रूप से ठीक हो जाते हैं।

आत्मा जब इस शरीर से उत्क्रमण करता है, तब जो मोक्ष को जाते हैं और आवागमन के चक्कर से छूट जाते हैं, वे सूर्यलोक को जाते हैं, परन्तु जो कर्मवश फिर लौटने के लिए जाते हैं, वे चन्द्रलोक को जाते हैं।[57] चन्द्रमा वीर्य का देवता है। चन्द्रलोक से जीव मनुष्य लोक को आते है।[58, 59] चन्द्रलोक से जीवों को किस प्रकार खींचा जाय ? जीवों के खींचने का वही तरीका है, जो सूर्यकान्तमणि के द्वारा सूर्यताप के खींचने में और चन्द्रकान्तमणि के द्वारा चाँद जल के खींचने में प्रयुक्त किया जाता है। जिस प्रकार चन्द्रकान्त के प्रयोग से चाँद जल की प्राप्ति होती है, उसी प्रकार चाँद पदार्थों को एकत्रित करने से चाँद वीर्य भी आकर्षित होता है। चाँद्र वीर्य ही में जीव रहते हैं। इसलिए वे उन पदार्थों में खींच कर लाते हैं, जो चाँद्राकर्षण के लिए विधि से एकत्रित किये जाते हैं। वे पदार्थ दूध, घृत, चावल, मधु, तिल, रजतपात्र, कुश और जल हैं। पुराण भी इसका समर्थन करते हैं–अश्वगंधा, घृत, दुग्ध और क्वथ पुत्र कारक होता है।[60] जौ, तिल, अश्वगंधा मुशली और गुड़ से तरूण और बलवान होता है।[61] ये सभी पदार्थ वीर्यवर्द्धक हैं, इसलिए आकर्षणानुकर्षण के सिद्धान्तानुसार चाँद वीर्य का इनके साथ सम्बन्ध हो जाता है और चाँद वीर्य खींच लाता है। पुत्रकामा मनुष्य पितृपिण्डयज्ञ अर्थात् पुत्रेष्टियज्ञ के द्वारा अपने पितरों को हविष्यान्न में आकर्षित करके वह हवि स्त्री को खाने के लिए देवे। शाली धान्य को पीसकर पिण्ड बनाकर इसको पकाये। पकाते समय जो उष्णता (भाफ) निकले, उसे नाक से सूँघे, और इनको निचोड़कर इनका पानी रूई के फोये से नाक में ग्रहण करे। हविषपिण्ड सूँघने अथवा खाने से वीर्य से गर्भ में जाते हैं।[62] यजुर्वेद में लिखा है कि आकाशस्थ पितर (कुमार) पितृयज्ञ या पुत्रयज्ञ के द्वारा पितर गर्भ को धारण करें। अर्थात् जो प्रजा की इच्छा रखता हो, वह पितृयज्ञ करें।[63] गृह्यसूत्र में इसी मन्त्र के लिए लिखा है कि 'आधत्त पितरो गर्भमिति मध्यमं पिण्डं पत्नी प्राश्नीयात्'। अर्थात् इस 'आधार' मन्त्र को कहकर बीच के पिण्ड को पत्नी खा जावे। यही बात मनुस्मृती में लिखी है कि पितृपूजन में रत पुत्र की इच्छा रखनेवाली पतिव्रता स्त्री बीच का पिण्ड खावे।[64] यह प्रक्रिया शरदपूर्णिमा के दिन लोग करते हैं। परन्तु विधिपूर्वक क्रिया तो पितृश्राद्ध के ही समय होती है। पितृश्राद्ध अपराह्न के समय होता है। उसमें घृत, दूध, मधु, कुश आदि सभी पदार्थ रक्खे जाते हैं। पितरों का प्रतिनिधि पुत्र अथवा पौत्र भी उन पदार्थों को छूता हुआ वहीं पर बैठता है। इसलिए यह सब हवि आदि सामग्री उसी प्रकार का यन्त्र बन जाती है, जिस प्रकार चन्द्रकान्त मणि। इसी में पितर खींचकर आते हैं।[65]

निम्न नियमानुसार आत्मा का आवाहन होता है–

1 संगतिकरण के नियमानुसार– एक यात्री का यात्री से, व्यवसायी का व्यवसायी के साथ संगतिकरण होता है। इसके विपरीत एक यात्री का विक्रेता के साथ संगति नहीं होता है। इस प्रकार हम देखते है कि जिसका गुण कर्म स्वभाव एक जैसा मिलता है उसके साथ संगति हो जाता है। यथा एक ही जगह जाने वाले यात्री, एक ही तरह काम करने वाले व्यक्ति में संगति हो जाता है। इसी तरह धार्मिक पुरूष की आत्मा शरीरधारणार्थ धार्मिक माता–पिता का ही आश्रय लेगा।

2 जीव शरीर धारण के नियमानुसार–जैसा कि हम सब जानते है कि आत्मा एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में अपने कर्म अनुसार जाता है। जिस व्यक्ति का गुण, कर्म एवं स्वभाव सात्विक होगा तो उसकी आत्मा सात्विक माता–पिता के आश्रय से शरीर धारण करेगा। यह ऐसी आत्मा कदापि तामसिक या राजसिक माता–पिता का आश्रय नही प्राप्त करेगा। दयालु परोपकारी अहिंसक सभी जीव को आत्मवत समझने वाला व्यक्ति कभी निर्दयी हिंसक शेर, चिता आदि जीव का आश्रय नही प्राप्त करेगा।

3 न्यूनतम प्रतिरोध के नियम अनुसार Law of Least resistance –न्यूनतम प्रतिरोध के नियम अनुसार पानी उसी दिशा में बहेगी जिस दिशा में प्रतिरोध बांध आदि नही होगा। इसी प्रकार शुभगुण कर्म स्वभाव वाली आत्मा उसी शुभगुण कर्म स्वभाव वाले दम्पति की ओर जायेगा जिसमें अशुभ दुगुण, दुर्व्यसन, दुष्टस्वभाव रूपी प्रतिरोध नही होगा।

4 कारण कार्य के नियमानुसार–वैशेषिक दर्शन के प्रणेता महर्षि कणाद मुनि एवं वर्तमान वैज्ञानिक तथ्यों से सिद्ध होता है कि 'कारणाभावः कार्याभावः' कारण के अभाव से कार्य का अभाव होता है। कोई भी कार्य बिना कारण के नही होता और हर कारण का कार्य अवश्य होता है। जिसे हम 'कारण' कहते है। वह पिछले जन्म का कार्य होता है। वह अगले जन्म का कारण बन जाता है। यथा वर्तमान में अच्छे बुरे कार्य करते हैं। इसी के फलस्वरूप 'कर्मफल' मरने के बाद अगला जन्म अच्छे या बुरे योनि में होगा। जिस व्यक्ति का कर्म उत्तम होगा उसका मरनोपरान्त उत्तम योनि में जन्म 'कार्य' होगा। जिस माता पिता का कार्य उत्तम होगा तो उस मरने वाले व्यक्ति का कार्य संगत होकर उस उत्तम गर्भ को प्राप्त करेगा। माता–पिता के शारीरिक खान–पान, रहन–सहन, संगति, मानसिक रूप से आचार–विचार और ईश्वरभक्ति भी शुभसंतान निर्माण का आधार है।

5 शक्ति–सामार्थ के नियमानुसार–फल बेचने वाला कहाँ जायेगा–बाजार में, और खरीदने वाला कहाँ जायेगा–बाजार में। इसी प्रकार दम्पति का शक्ति–सामार्थ दिव्य संतान की होगी तो दिव्य संतान की भी शक्ति–सामार्थ सुयोग्य माता–पिता को प्राप्त करने की होगी। इसतरह दोनों एक दूसरे को प्राप्त करेगा।

6 आकर्षण शक्ति के निमानुसार–व्यक्ति का आकर्षण–समानता पर आधारित रहता है–आदत (नशापान करने वाले), स्वभाव (शांत या उग्र) व्यवसाय (शिक्षक का शिक्षक से या साधु–संत साधु के पास ही रहना चाहता है न कि दुष्ट के संग) उद्देश्य, निवास स्थान (एक गाँव या प्रदेश के रहने वाले में), एक ही दिशा में गमन (एक ही दिशा में यात्रा) आदि के कारण व्यक्ति में समानता होती है और एक–दुसरे में आकर्षण होता है। जो व्यक्ति धर्म परायण होगा उस व्यक्ति का मृत्योपरान्त जन्म कदापि अधार्मिक घर में नही हो सकता है। यह जीवात्मा ऐसे ही दम्पति के पास जायेगा, जो धार्मिक होगा। इसलिए धार्मिक संस्कार कर धार्मिकता में वृद्धि करते है। शारीरिक और मानसिक समर्थानुसार सात्विक संतान मिलेगा। समान्यतः संसार का यही नियम है कि जो जिसके योग्य होगा वह वस्तु उसे मिलेगा।

सारांश

संस्कार, विश्वास या श्रद्धा मन का एक बड़ा धर्म है, जिससे मनोबल बढ़ता है और संसार में जो चाहे वह चीज उससे मनुष्य प्राप्त कर सकता है।[66] अतः जिस प्रकार की सन्तान की इच्छा हो, उसी प्रकार की तैयारी माता–पिता को करनी होगी। क्योंकि आत्मा मृत्यु के पश्चात् पूर्व शरीर के विचारानुकूल[67] या चिन्तनानुकूल[68] या कामनाओं[69] को ही मानता हुआ जो–जो इच्छा करता है, उस इच्छाओं के फलस्वरूप उस–उस योनि में ही[70] प्राण ग्रहण करने के लिए सूक्ष्म शरीर को लेकर चलता है। वह पहले–पहले पिता के वीर्य में विकास पाता है, और उसके पश्चात् माता के गर्भाशय में प्रवेश करता है।

गाजर, मूली या मिर्च का बीज बीज समान नहीं हैं। खेत में सभी प्रकार के बीजों की सजातीय सामग्री उपस्थित है। परन्तु गाजर का बीज अपनी सजातीय वस्तुओं का तो ग्रहण करता है और शेष को छोड़ देता है। यही मूली और शलजम के बीजों का हाल है। इसी प्रकार पूर्वजन्म के प्रभाव कार्य करते हैं। संतान अपने संस्कारानुसार माता–पिता का चयन करता है, माता–पिता भी

गर्भाधान संस्कार के द्वारा वीर्य स्थित अस्सी मिलियन जीवाणु में से सुयोग्य जीवात्मा (वीर्याणु) का आवाहन कर गर्भ में स्थित करते हैं। यदि एक पुरूष अपना आचार व्यवहार तथा स्वभाव आदि बदल दे तो उसका वीर्य उस नये आचार व्यवहार का फोटो उतार कर रख लेगा और उनको सन्तान के रूप में व्यक्त करेगा। कामनाओं को ही मानता हुआ जो–जो इच्छा करता है, वह इच्छाओं के फलस्वरूप उस उस योनि में जाता है।

मान लें कि आप यात्रा से घर (ईश्वर के शरण में) जा रहे हो, लेकिन आपके वाहन अचानक खराब हो जाता है। तब आप वाहनार्थ किसी को पुकारेंगे। अगर यह पुकार निष्फल हो गया तो उस स्थान के आस–पास रहने वाले रिस्तेदारों के पास रहने के लिए विचार करेंगे और जो रिस्तेदार आपको सर्वाधिक मनानुकूल सुख सुविधा दे सकते हैं उनके पास जायेंगे। अगर रिस्तेदार भी आप ही को आने की प्रतिक्षा करते होंगे तो आपका स्वागत और अधिक अच्छी तरह से होगा। अन्यथा आप उसी जगह विभिन्न प्रकार के यातनाओं को सहते हुए। अगले वाहन (जीवन) की प्रतिक्षा करेंगे। ठीक इसी प्रकार जीवात्मा अपने अनुकूल माता–पिता का आश्रय लेता है। इस लिए माता–पिता शारीरिक एवं मानसिक रूप से उसके स्वागत की सारी तैयारी पूर्ण रखते हैं, तो वैसी आत्मा आयेगी। एक अच्छे व्यक्तित्व या संस्कारी व्यक्ति की ही आत्मा के प्रवेश से अच्छी संस्कारी संतान हो सकती है। अतः गर्भाधान संस्कार (यज्ञादि) दिव्यात्मा का आवाहन का एक पवित्र माध्यम है, वीर्य में जीव असंख्य है। यज्ञ की सामग्री से सभी जीवों को लाभ होता है। स्थुल शरीर छोड़ने के बाद जो पवित्रात्मा होती है। वह इस यज्ञीय वातावरण में गर्भस्थ होने के लिए आकर पवित्र माता–पिता के पास पहुँचता है और गर्भाधान के समय रज–वीर्य के मिलन काल में जीवात्मा का प्रवेश हो जाता है।

निष्कर्ष–

स्त्री और पुरूष जैसे आहार, व्यवहार तथा चेष्टा से संयुक्त होकर परस्पर समागम करते हैं, उनका पुत्र भी वैसे ही स्वभाव का, होता है। [71] अंग–अंग से बालक उत्पन्न होता है। संपूर्ण तन की प्रतिच्छाया संतान पर पड़ती है। हृदय की सभी भावनाएं साररूप से वीर्य के उस कण में होती है। [72] जिसको जीव ने अपना पहला शरीर धारणार्थ अपने अनुकूल भावी पिता के शरीर में वनस्पति, औषधि, वायु द्वारा चुपके से वीर्य के कण में प्रविष्ट होता है। [73] परमात्मा का नियम है कि वह जीव को उसके कर्मानुसार ठीक–ठीक फल देता है; न न्यून न अधिक। अर्थात् अमुक फल उसी को मिलेगा, जो अपने कर्मों से उसका अधिकारी होगा। इसीलिये यदि कोई माता–पिता महल बनायेंगे, तो उस महल में रहने योग्य ही जीव भेजा जायेगा। यदि अस्तबल बनायेंगे, तो अस्तबल में बंधने योग्य जीव भेजा जायेगा। यदि गौशाला बनायेंगे, तो उसमें रहने के लिये भी गौ ही आयेगी। अतः ब्रह्मज्ञानी योगी के कुल में कोई ऐसा पुरूष जन्म नहीं लेता, जो ब्रह्मवित् न हो। ब्रह्मवित् माता–पिता के शरीर से ऐसे शरीर बनने की सम्भावना नहीं है, जिसमें अब्रह्मवित् जीव रह सके। [74]

इसके लिए प्रार्थना चिकित्सा (PRAYER THERAPY) को जानेंगे तो और अधिक गर्भधान संस्कार की दार्शनिकता को समझ पायेंगे।

संदर्भ सूची–

1. ऐसा दिन आयेगा जब मृतक लोक अपने जीवन में किये हुए शुभाशुभ कर्मो के अनुसार फल या दण्ड पाने के लिए उठेंगे। यह मुहम्मद साहब अलअजब (मेरूदण्ड Coseygis) हड्डी से मानते हैं। यहूदी लूज नामक अस्थि से मानते है। जो मुहम्मद साहब चालिस दिन के वर्षा से बारह हाथ ऊँचाई तक पानी से ढक देगी और शरीरों को पौधों के समान उगायेगी। यहूदी ओस से मानते हैं, जो मिट्टी को उपजाऊ बना देगी।; धर्म का आदि स्रोत [THE FOUNTAIN HEAD OF RELIGIONS] ; रिटायर्ड चीफ जस्टिस; टिहरी गढवाल राज्य तथा भूतपूर्व प्रोफेसर मेरठ कॉलेज तथा प्रधान आर्य समाज सार्वदेशिक सभा, दिल्ली। अनुवादक–पंडित हरिशंकर शर्मा
2. आत्मा अततेर्वा–अत सात्यगमने– निरूक्तकार यास्काचार्यानुसार
3. ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका; महर्षि दयानंद सरस्वती ; पाठ–वेदनित्यत्व विचारः; पृष्ठ–43
4. जीवात्मा; पाठ–जन्म से पूर्व और मृत्यु के पीछे; पृष्ट–136–137 आत्मदर्शन; उपोद्घात; पाँचवाँ परिच्छेद; पृष्ट–७५
5. जीवापेतं वा किलेदं म्रियते न जीवो म्रियते।; छान्दोग्योपनिषद् ६/११
6. यद्यपि शुक्ररजसी कारणो, तथापि यदैवातिवाहिकं सूक्ष्मभूतं रूपशरीरं प्राप्नुतः, तदैव ते शरीरं जनयतः, नान्यदा। यदि शुक्रशोणितमातिवाहिकशरीरनिरपेक्षं गर्भ जनयेत्, तदाऽसत्यपि जीवाधिष्ठाने जनयेत्, न तु जनयति, तस्मादात्मस्थसूक्ष्म–भूतादेव बीजरूपाच्छुकशोणितयुक्तांगर्भजन्मेति।; चक्रपाणिदत्त
7. तेजो यथार्करश्मीनां स्फटिकेन तिरस्कृतम्। नेन्थनं वृष्यते गच्छत्सत्त्वो गर्भाशयं तथा।। ;अष्टांगहृदय ।
8. कर्मात्मकत्वान्न तु तस्य दृश्यं दिव्यं बिना दर्शनमस्ति रूपम्।; चरक
9. शुक्रशोणितजीवसंयोगे तु खलु कुक्षिगते गर्भसंज्ञा भवति।। यथा सतामेव शुक्रशोणितजीवानां प्राक् संयोगादगर्भत्वं न भवति, तच्च संयोगाद्भवति।; चरक
10. संसुप्तकरणस्त्वेवं बीजतां यात्यसौ (जीवः) नरे। तद्बीजं योनिगलितं गर्भो भवति मातरि।। आशापाशशताबद्धा वासनाभाववधारिणः। कायात्कायमुपायान्ति वृक्षाद् वृक्षमिवाण्डजाः।। ;योगवासिष्ठ; ३/५५।
11. सुश्रुतसंहिता; महर्षि धन्वन्तरि ; शरीरस्थान; अध्याय–0३; सूत्र–३
12. वैदिकैः कर्मभिः पुण्यैर्निषेकादिर्द्विजन्मनाम्। कार्यः शरीर संस्कारः पावनः प्रेत्य चेह च।।; मनुस्मृति; अध्याय–२; श्लोक–२६
13. प्राणाधिपः संचरति स्वकर्मभिः ''''''।; श्वेताश्वेतरोपनिषद् ५–७
14. तस्मिन्यावत्संपातमुषित्वा '''' पुनर्निवर्तन्ते।'; छान्दोग्योपनिषद् ; ५/१०/५ शुद्धे शुक्रार्त्तवे सत्वः स्वकर्मक्लेशचोदितः। गर्भ सम्पद्यते युक्तिवशादग्निरिवाणौ।।; अष्टांगहृदय; वाग्भट
15. एवं गताऽगतैः कर्मपाशैर्बद्धाश्च पापिनः। कदापि न विरज्यन्ते मम मायाविमोहिताः ।। ;गरूडपुराण–सारोद्धार;षष्ठोध्याय; श्लोक–४२
16. बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन। तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतन।।; गीता; अध्याय–४; मंत्र–५ (हे अर्जुन मेरे और तेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। उन सब को मैं जानता हूँ, परन्तु तू नहीं जानता है)
17. नयङ्ङुत्तानामन्वेषि भूमिम्।।; ऋग्वेद; मंडल–१0; सूक्त–१४२; मंत्र–५
18. वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि। तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयति नवानि देहि।।; गीता; अध्याय–0२; श्लोक–२२
19. देहादुत्क्रमणं चास्मात् पुनर्गर्भे च सम्भवम्। योनिकोटि सहस्रेषु सृतिश्चास्यान्तरात्मनः।।; मनुस्मृति; अध्याय–0६; श्लोक–६३
20. शुभाशुभफलं कर्म मनोवागदेहसम्भवम्। कर्मणा गतयो नृणामुत्तमाधममध्यमाः।।; मनुस्मृति; अध्याय–१२; श्लोक–0२
21. ऊर्ध्वं सत्त्वविशाला।। ; सांख्यदर्शन; अध्याय–३; सूत्र–४८
22. तमो विशाला मूलतः।।; सांख्यदर्शन; अध्याय–३; सूत्र–४६
23. मध्ये रजो विशाला।।; सांख्यदर्शन; अध्याय–३; सूत्र–५0

24. शुभाशुभाभ्यां कर्मभ्यां प्रेरणान्मनसो गतेः। देहाद्देहान्तरं याति कृमिवच्छाश्वतोऽव्ययः।। मनो हि जन्मान्तरसंगतिज्ञम्।। रघुवंशम्; महाकवि कालिदास
25. कर्मणा चोदितो येन तदाप्नोति पुनर्भवे। अभ्यस्ताः पूर्वदेहे ये तानेव भजते गुणान्।।६०।।; सुश्रुतसंहिता; शरीरस्थाने शुक्रशोणितशुद्धिशरीरं नाम द्वितीयोऽध्यायः
26. कामान् यः कामयते मन्यमानः स कामभिर्जापते तत्र मंत्र।; मुण्डकोपनिषद् ३/२/२
27. संसरति निरूपभोगं भावेरविवासितं लिंगम्। ; सांख्यकारिका
28. शुभाशुभाभ्या कर्मभ्यां प्रेरणान्मनसो गतेः। देहाद्देहान्तरं याति कृमिवच्छाश्वतोऽव्ययः।। ; रघुवंशम ; महाकवि कालिदास मनो हि जन्मान्तरसंगतिज्ञम्। रूपाद्धि रूपप्रभवः प्रसिद्धः कर्मात्मकानां मनसो मनस्तः।।; चरक संहितायां; शरीरस्थाने; द्वितीयोऽध्यायः।
29. मृतो नष्ट इति प्रोक्तो मन्ये तच्च मृषा ह्यसत्। स देशकालान्तरितो भूत्वा भूत्वाऽनुभूयते।।; योगवासिष्ठ ; ५/७१/६५ अनुभूय क्षणं जावो मिथ्यामरणमूर्च्छनम्। विस्मृत्य प्राक्तनं भावमन्यं पश्यति सुव्रत।। ;योगवासिष्ठ; ३/२०/३१ आशापाशशताबद्धा वासनाभावधारिणाः। कायात्कायमुपायान्ति वृक्षाद् वृक्षमिवाण्डजाः।। ;योगवासिष्ठ ; ४/४३/२६
30. निरंतरं च मिश्रं च लभते कर्म पार्थिव। कल्याणं यदि वा पापंनतु नाशोऽस्यविद्यते।।१६।।; महाभारत; शांतिपर्व; अध्याय–२९०; श्लोक–१६ हे राजन् निरन्तर मिश्रत कर्मों से मनुष्य होता है चाहे कल्याण चाहे पाप कर्मों का नाश नहीं होता।
31. योनि मन्ये प्रपद्यन्ते शरीरत्वाय देहिनः। स्थाणुमन्येऽनुसंयतन्तियथा कर्म यथा श्रुतम्।। कठोपनिषद्; कठवल्ली 05/07 यदि मेरे शुभाशुभ कर्मों के अनुसार उसी योनि को प्राप्त करता हूँ, परन्तु यदि मेरे अशुभ कर्म अधिक हो तो पशु, पक्षी या वनस्पति की योनि में मुझे जाना होता है।
32. शरीरजैः कर्मदोषैर्याति स्थावरतां नरः। वाचिकैः पक्षिमृगतां मानसैरन्त्यजातिताम्।।; मनुस्मृति; अध्याय १२; श्लोक 0९ जो जीवात्मा शारीरिक कर्मो के दोषों से स्थावर (वृक्षादि) की योनियों में जाता है। वाणी के दोषों कें कारण पशु व पक्षियों की योनियों में और मानसिक दोषों के कारण चाण्डालादि का जन्म लेता है।
33. तद्य इह रमणीयचरणा अभ्याशो ह यत्ते रमणीयां योनिमापद्येरन् ब्राह्मणयोनिं वा क्षत्रियोनिं वा वैश्ययोनिं वा। अर्थ य इह कपूयचरणा अभ्याशो ह यत्ते कपूयां योनिमापद्येरन्, श्वयोनिं वा शूकरयोनि चाण्डालयोनिं वा।; छान्दोग्योपनिषद ५–१०–७) जो इस जन्म में शुभ से शुभ आचारण वाले होते हैं। वे ब्राह्मण, क्षत्रिय अथवा वैश्य के घर शुभ जन्म को प्राप्त करते हैं। किन्तु जो इस जन्म में अशुभ आचारण वाले होते हैं वे तत्काल कुत्ते, शूकर तथा चाण्डाल जैसी नीच योनियों में जन्म लेते हैं।
34. अथ य एतौ पन्थानौ न विदुस्ते कीटाः पतंगा यदिदं दन्तशूकम् ।; बृहदारण्यकोपनिषद ६–२–१६) और जो इन दोनों मार्गों (देवायान अथवा पितृयान) से नहीं जाते, वे कीट पतंगे और जो दाँत से काटने वाले सर्प होते हैं, उन नीच योनियों में जन्म लेते हैं।
35. यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत्। तदोत्तमविदां लोकातमलान् प्रतिपद्यते।।; गीता; अध्याय–१४; श्लोक–१४ यदि प्राणी सत्त्वगुण की वृद्धि के समय मृत्यु को प्राप्त होता है तो वह उत्तम कर्म करने वालों के मलरहित (पापरहित) लोकों को प्राप्त होता है ।
36. प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः। शुचीनां श्रीमतां गृहे योगभ्रष्टोऽभिजायते।।; गीता; अध्याय–६; श्लोक–१ योगी पुरूष पुण्यवानों के लोकों को प्राप्त होकर उनमें बहुत वर्षों तक निवास करके शुद्ध आचरण वाले श्रीमान् पुरूषों के घर में जन्म लेता है।
37. देवत्वं सात्त्विका यान्ति मनुष्यत्वं च राजसाः। तिर्यक्त्वं तामसा नित्यमित्येषां त्रिविधा गतिः।।; मनुस्मृति; अध्याय–१२; श्लोक–४० सतोगुणी जीव देवत्व, रजोगुणी मनुष्यत्व को और तमोगुणी पशु–पक्षी योनियों को प्राप्त करते हैं।
38. असुर्यानाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः। तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः। यजुर्वेद;अध्याय–४०; मंत्र–३ जो पापाचरण से अपने आत्मा का हनन करते हैं, वे मरने के पश्चात् उन योनियों में जन्म लेते जो कि अन्धकार से आवृत्त और तमोगुणी होते हैं।
39. उदानः पुण्येन पुण्यं लोकं नयति पापेन पापमुभाभ्यामेव मनुष्य लोकम्।; प्रश्नोपनिषद् ३–७ पुण्य कर्मों के कारण उदान पुण्य लोक को, पाप कर्मों के कारण पाप लोक (नीची योनियों) को और पुण्य और पाप कर्मों के कारण मनुष्य लोक को जीवात्मा ले जाता है।
40. यामीस्ता यातनाः प्राप्य स जीवो वीतकल्मषः। तान्येव पंचभूतानि पुनरप्येति भागशः।।; मनुस्मृति; अध्याय १२; श्लोक २२ आत्मा दुष्कर्मो का फल यातना (दुःख) एक नियन्ता न्यायकारी परमात्मा की व्यवस्था से भोग कर और पापरहित होकर फिर मानव शरीर को प्राप्त करता है।
41. अपाङ् प्राङेति स्वधया गृभीतोऽमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः।; ऋग्वेद; मंडल–१; सूक्त–१६४; मंत्र–३८ आत्मा उसी योनि में नया शरीर का चयन करके पूर्व शरीर का त्याग करता है। वनस्पति अथवा पशु योंनियों में अनगिनत जन्म और मरण के पश्चात् पाप और पुण्य का पलड़ा सम (सन्तुलित) होने पर पुनः मनुष्य योनि में जन्म लेने का अधिकारी होता है।
42. तथा सह तथाभूतया यदा–पुमानव्यापन्नबीजो मिश्रीभावं गच्छति, तदा तस्य हर्षोदीरितः परः शरीरधात्वात्मा शुक्रभूतोऽगांदगांतत् संभवति। स तथा हर्षभ्यूतेनात्मनोदीरितश्चाधिष्ठितश्च बीजरूपो धातुः पुरूषशरीरादभिनिष्पत्त्योचितेन पथा गर्भाशयमनुप्रविश्यार्तवेनाभिसंसर्गमेति।; चरकसंहिता;शारीरस्थान ४
43. पुंसि वैरे तो भवति तत् स्त्रिया मनुषिव्यते । तद्वै पुत्रस्य वेदनं तत् प्रजापतिरं वीत्।।; अथर्ववेद; काण्ड–१; सूक्त–६; मंत्र–११
44. जीवः कर्म समयुंक्तः शीघ्रं रेतस्त्वमा गतः। स्त्रीणां पुष्पं समा साद्य सूते कालेन भारत।।; महाभारत; शान्तिपर्व; अध्याय–२५२; श्लोक–३४
45. अहोष्मान्तर्गतश्चापि गर्भत्वं समुपेयिवान्। दशमासान् वसन् कुक्षौ नैषोऽन्नमिव जीयते।।; महाभारत; शान्तिपर्व; अध्याय–२५२; श्लोक–११ उपनिषद् में बतलाया गया है–तत्सृष्ट् वा तदेवानुप्राविशत्।। (अर्थात् उसको रचकर उसमें जीव प्रथम पिता के शरीर में आकर पिता के वीर्य के साथ, माता के शरीर में जाता है और वह वीर्य तथा रक्त और तीसरा जीव तीनों जब मिल जाते हैं तब इसी का नाम गर्भ की स्थापना होता है यदि ऐसा नहीं होता अर्थात् रज और वीर्य के साथ जीव शामिल न होता तो गर्भ स्थापित नहीं हो सकता था। संसार में चीजें दो प्रकार से बढ़ती हैं:–(१) एक बाहर से जैसे पत्थर, लोहा, सोना, चांदी आदि और (२) दूसरे भीतर से जैसे वृक्ष, पशुओं और मनुष्यों के शरीर आदि। इन दोनों प्रकार की वस्तुओं की बढ़ोतरी में यह अन्तर क्यों है ? इसका कारण जीव का होना और न होना है। जिनमें जीव नहीं होता वे वस्तुयें बाहर से बढ़ती हैं और जिनमें जीव होता वे भीतर से बढ़ा करती हैं। गर्भ भीतर से बढ़ा करता है इसलिए मानना पड़ता है कि उसके भीतर जीव है। अन्यथा वह न बढ़ सकता और न स्थापित हो सकता था, केवल रजोवीर्य के मेल से गर्भ स्थापित नहीं हुआ करता ।

46. तद्यथा तृणजलायुका तृणस्यान्तं गत्वाऽन्यमा क्रम्यात्मानमुपसंहरत्ये वमेवायमात्मेदं शरीरं निहत्याविद्यांगमयित्वाऽन्यमाक्रममाक्रम्यात्मानमुपसंहरति।;वृहदार ण्यकोपनिषद्;४/४/३ नीचली योनियों में शरीर त्याग करने और नया शरीर धारण करने में कोई समय नहीं लगता। तृणजलायुका (बरसाती 'लट'नाम का क्षुद्र प्राणी) की भांति जो कि एक तृण के अन्त में पहुँच कर नया तृण ग्रहण करने के पहिले तृण को छोड़ता है। उसी प्रकार यह आत्मा एक देह को त्याग कर दूसरे शरीर का अवलम्वन लेकर चला जाता है।
47. तस्मिन् देहे शवीभूते वाते चानिलतां गते। चेतनं वासनायुक्तं रवात्मतत्त्वेऽवतिष्टति। 'जीव' इत्युच्यते तस्य नामाणोर्वासनावतः श्तोऽय–महमादिष्टः स्वकर्मफलभोजने। गच्छाम्याषु शुभं स्वर्गमितो नरकमेव च।। तत्र चारूफलं भुक्त्वा प्रविष्य हृदयं मृणाम्। रेतसामधितिष्ठन्ति गर्भजातिक्रमोचिते।।
48. 'आत्मा पुत्रः' 'आत्मजः', अंगादंगात् संभवसि हृदयादभिजायसे। आत्मा वै पुत्रनामासि सजीवः शरदः शतम्।। इसके अनुसार भी जीव पुरूष के वीर्य में ही अधिष्ठित होकर उसी के साथ गर्भाशय में प्रवेश करता है।
49. विशेष नपुंसकता के धार्मिक कारण में देखें। गर्भस्थ बच्चे की हत्या का आँखों देखा विवरण ।
50. पूर्वे जनुषि या नारी गर्भघातकरी ह्यभूत्। गर्भपातेन दुःखार्ता साऽत्र जन्मनि जायते।।; वृद्धसूर्यारूणकर्मविपाक; ४७७/१
51. 'जो स्त्री पूर्वजन्म में गर्भपात करती है, वह इस जन्म में भी गर्भपात का दुःख भोगनेवाली होती है अर्थात् उसकी सन्तान नहीं होती।
52. वन्ध्येयं या महाभाग पृच्छति स्वं प्रयोजनम्। गर्भपातरता पूर्वे जनुष्यत्र फलं त्विदम्।। वृद्धसूर्यारूणकर्मविपाक (६५६/ १, ८५६/१, ६२१/१, १८५७/१) कोई स्त्री पूछती है कि मैं इस जन्म में वन्ध्या (सन्तानहीन) किस कारण हुई, तो इसका उत्तर है कि यह पूर्वजन्म में तेरे द्वारा किये गये गर्भपात का ही फल है।
53. गर्भपातनपापाढया बभूव प्राग्भवेऽण्डज। साऽत्रैव तेन पापेन गर्भस्थैर्यं न विन्दति।।; वृद्धसूर्यारूणकर्मविपाक; ११८७/१ हे अरूण! जो पूर्वजन्म में गर्भपात करती है, इस जन्म में उस पाप के कारण उसका गर्भ नहीं ठहरता अर्थात् वह सन्तानहीन होती है।'
54. कर्मणा दैवनेत्रेण जन्तुर्देहोपपत्तये। स्त्रियाः प्रविष्ट उदरं पुंसो रेतः कणाश्रयः।। गरूडपुराण–सारोद्वार ;पृष्ठ–७२–८१ ,गीता प्रेस, गोरखपुर
55. दशमासांछशयानः कुमारो अधि मातरि ॱॱॱ।; ऋग्वेद; मंडल–५; सूक्त–६; मंत्र–७८ बालक दस चन्द्रमास पर्यन्त माता के गर्भ में सोता हुआ ॱॱ।
56. पूर्वजन्म कृतं पापं, व्याधिरूपेण बाधते। तच्छान्तिरोषधैः जप–होम–सुरार्चनैः।। आयुर्वेद का प्रसिद्ध ग्रन्थ माधवनिदान
57. 'ये वै के चास्माल्लोकात् प्रयन्ति चन्द्रमसमेव ते सर्वे गच्छन्ति'; कौषीतकि उपनिषद् (१/२)
58. तथा च तत्पितृलोकाज्जीवलोकमभ्यायन्ति।; शतपथ ब्राह्मण १३/४/७/६
59. आर्स्मिश्चन्द्रे अधियद्धिरण्यं तेनायं कृणवत् वीर्याणि।; अथर्ववेद; काण्ड–६; सूक्त–२७; मंत्र–१०
60. अश्वगंधा घृतं दुग्ध क्वथितं पुत्रकारकम्।।२८।।; गरूडपुराण; आचाराध्याय–१७६; श्लोक–२८
61. यवास्तिलाश्वगंधा च मुशली सरला गुडम्। एभिश्च रचितां जग्ध्वा तरूणो बलवान् भवेत्।।५।।; गरूडपुराण; आचाराध्याय–१८२; श्लोक–०५
62. 'अथ यत् प्रजाम् इच्छते, यत् पितृभ्यो निपृणाति तेन पितृणाम्'। शतपथ ब्राह्मण १४/४/२/२६
63. 'आधात्त पितरो गर्भे कुमारं पुष्करसृजम्। यथेद पुरूषोऽसत्'। यजुर्वेद; अध्याय–२; मंत्र–२३
64. पतिव्रता धर्मपत्नी पितृपूजनतत्परा। मध्यमं तु ततः पिण्डमद्यात्सम्यक् सुखार्थिनी।। (मनुस्मृति)
65. परा यात पितरः सोम्यासो गम्भीरैः पथिभिः पूर्याणैः। अधा मासि पुनरा यात नो गृहान् हविरत्तुं सुप्रजसः सुवीराः।; अथर्ववेद; कांड–१८; सुक्त–४; मंत्र–४
66. सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत। श्रद्धामयोऽयं पुरूषो यो यच्छन्द्धः स एव सः।।; गीता; अध्याय–17; श्लोक–3 हे भारत सभी मनुष्यों की श्रद्धा उनके सत्त्व (स्वभाव, संस्कार) के अनुरूप होती है। यह पुरूष श्रद्धामय है। इसलिए जो पुरूष जिस श्रद्धा वाला है वह स्वयं भी वही है अर्थात् जैसी जिसकी श्रद्धा वैसा ही उसका स्वरूप होता है।
67. अथास्यास्यमितर आत्मा कृत कृत्यों वयोगत प्रति स इतः प्रयन्नेव पुर्नजायते'' ऐतेरियोपनिषद् आत्मा जब शरीर रोग ग्रस्त या जीर्ण–शीर्ण होने पर आत्मा उस शरीर के विचारानुकूल योनियों की ओर प्राण ग्रहण करने के लिए दौड़ता है।
68. ''यं यं लोकं मनसा संविभाति विशुद्धसत्त्वः कामयते यांश्च कामान्। तं तं लोकं जायते तांश्च कामाँस्तस्मादात्माँ ह्यर्च्चयेद्भूतिकामः।। मुण्डकोपनिषद् 03/01/10 निर्मल बुद्धि वाला पुरूष जिस–जिस लोक (योनि) को मन से चिन्ता करता है और जिन भोगों को (वासना के वशीभूत होकर) चाहता है, उस–उस लोक और उस–उस भोगों को प्राप्त करता है। इसलिए सिद्धि का इच्छुक आत्मवित् पुरूष की पूजा करें।
69. बृहदारण्यक उपनिषद् ४/४/५ पुरूष कामनामय है, जैसी कामना करता है, उसी के अनुसार संकल्प होता है, जैसा संकल्प होता है, वैसा ही कर्म का अनुष्ठान करता है, कर्म के अनुसार ही फिर फलों को भोगता है।
70. कामान् यः कामयते मन्यमानः स कामभिर्जायते तत्र तत्र। मुण्डकोपनिषद् ३/२/२ कामनाओं को ही मानता हुआ जो–जो इच्छा करता है, वह इच्छाओं के फलस्वरूप उस उस योनि में ही जाता है। यह आत्मा काम–अकाम, क्रोध–अक्रोध, धर्म–अधर्म आदि भावनाओं से प्रभावित होता रहता है, यह जैसा अनुष्ठान या आचरण करता है–शुभ अथवा अशुभ–'उसी के अनुसार यह पुण्यात्मा या पापात्मा कहलाता है। लोकोक्ति भी इस में प्रमाण है–''अन्तमता सो गता'' अर्थात् अन्त में जैसी मति होती है, उसी के अनुकूल गति होती है।
71. आहाराचारचेष्टाभिर्यादृशीभिः समन्वितौ। स्त्रीपुंसौ समुपेयातां तयोः पुत्रोऽपि तादृशः।। ;सुश्रुतसंहिता, शारीरस्थान २/४६/५0)
72. अंगादंगात्सम्भवसि, हृदयादभिजायसे। आत्मा वै पुत्र नामासि स जीव शरदः शतम्।। पाररस्कर गृह्यसूत्र;१/१८/२ हे शिशु! तू मेरे अंग–अंग के सार से पैदा हुआ है; हृदय से प्रकट हुआ है। मेरा आत्मा ही पुत्र नामवाला है। वह शतायु हो।
73. तथा सह तथाभूतया यदा–पुमानव्यापन्नबीजो मिश्रीभावं गच्छति, तदा तस्य हर्षोदीरितः परः शरीरधात्वात्मा शुक्रभूतोऽगांदगांतत् संभवति। स तथा हर्षभ्यूतेनात्मनोदीरितश्चाधिष्ठितश्च बीजरूपो धातुः पुरूषशरीरादभिनिष्पत्त्योचितेन पथा गर्भाशयमनुप्रविश्यार्तवेनाभिसंसर्गमेति।; चरकसंहिता; शारीरस्थान ४
74. 'नास्याब्रह्मवित्कुलेभवति य एवं वेद'; माण्डूक्य उपनिषद्।१0।